IJAER/ May-June 2023/Volume-12/Issue-3 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

डॉ. धर्मवीर के कबीर पर लिखे निबंध की आलोचनात्मक जांच

अजेंद्र कुमार
(शोधार्थी) हिंदी विभाग, महात्मा ज्योतिबा फुले रुहेलखंड विश्वविद्यालय बरेली ।

डॉ. राजेश कुमार
शोध निर्देशक (हिंदी विभाग) राजकीय रज़ा स्नातकोत्तर महाविद्यालय
रामपुर, उत्तर प्रदेश (भारत)

शोध

संत कबीर दास, जो उदार सामाजिक व्यवस्था में अग्रणी होने के लिए प्रसिद्ध हैं, मध्यकाल में हुए भक्ति आंदोलन में एक महत्वपूर्ण व्यक्ति थे। हालाँकि ऐसा कोई प्रमाण नहीं है जिसे स्थायी माना जा सके, लेकिन अधिकांश लोगों का मानना है कि कवि कबीर दास का जन्म काशी में हुआ था, जो 15वीं शताब्दी के मध्य में उत्तर प्रदेश के वाराणसी में स्थित है। इस दिन, कबीर के जीवन की बारीकियाँ अभी भी लोगों के लिए अज्ञात हैं। जहाँ तक हमारी जानकारी है, कबीर के जन्म रहस्य के बारे में ऐसे विवरण हैं जो बाइबल के शास्त्रों में पाए जाने वाले एक उदाहरण का अनुसरण करते हैं। उनके दोहे, जो दोहे और कविताएँ हैं, उनकी सबसे प्रसिद्ध रचनाओं में से हैं। ये कविताएँ और दोहे कभी-कभी गुरु ग्रंथ साहिब का संदर्भ देते हैं, जो एक सिख धर्मग्रंथ है। जब उनके आध्यात्मिक ज्ञान की बात आई, तो कबीर पूरी तरह से उसमें लीन हो गए। मोसिनफ़ानी में डेविस्टन और अबुलफ़ज़ूर में ऐनेकबारी दोनों ने उन्हें "मुवाहिद" के रूप में संदर्भित किया है, जिसका शाब्दिक अर्थ है "ईश्वर में विश्वास करने वाला।" उन्होंने हिंदू धर्म और इस्लाम दोनों के प्रति अपनी असहमति व्यक्त की, यह तर्क देते हुए कि पूर्व वेदों की गलत समझ पर आधारित था। कई अवसरों पर, उन्होंने खतना और पवित्र धागे जैसे व्यर्थ समारोहों के महत्व पर सवाल उठाया। कबीर एक साहसी अग्रदूत थे जो भारत में हिंदू और मुस्लिम आबादी की एकता में एक महत्वपूर्ण अग्रदूत थे। वे मानवीय आस्था के भी एक दूत थे और उन्होंने प्रचार किया कि ईश्वर सभी मानवता के लिए प्रकट हुए हैं। इस तथ्य के बावजूद कि उनका जीवन रहस्य में डूबा हुआ है और व्यापक रूप से ज्ञात नहीं है, एक सामाजिक और धार्मिक सुधारक के रूप में उनका योगदान सभ्यता की उन्नति में योगदानकर्ता बन गया है और समकालीन समाज के लिए एक मजबूत आधार स्थापित किया है। दूसरी ओर, कबीर की विचारधारा का क्रियान्वयन अभी भी अपने शुरुआती चरणों में है और अभी तक इसकी व्याख्या नहीं की गई है। यह अंतर कबीर दास के लक्ष्यों और मानव एकता में योगदान के वर्तमान अध्ययन के लिए प्रेरणा का काम करता है। मूल्यांकन मानव एकता को एक ऐसे समाज के आवश्यक घटक के रूप में देखने वाले महान संत के दर्शन और दृष्टिकोण को ध्यान में रखता है जो स्थिर और रचनात्मक दोनों है।

मुख्य बिंदु - कबीर दास के आदर्श, कबीर के दर्शन।

परिचय

जिस आधुनिक समाज में हम सभी वर्तमान में रह रहे हैं, उसमें यह आम तौर पर स्वीकार किया जाता है कि प्रगति हुई है, और उदारवाद और समावेशिता के लिए काफी जगह है। फिर भी, हम ऐसे साक्ष्यों को देखते रहते हैं जो व्यक्तियों के बीच पूर्वाग्रह, अन्याय और नैतिकता की कमी के कई उदाहरणों को प्रदर्शित करते हैं, जो हिंसक संघर्षों और विनाशकारी संघर्षों को जन्म दे सकते हैं। इस माहौल के मद्देनजर, हमारे लिए उन ऐतिहासिक शख्सियतों और सुधारों पर विचार करना निःसंदेह आवश्यक है जो व्यक्तियों और समाज को उनकी दमनकारी स्थिति से बचाने के लिए लागू

किए गए थे। इन व्यक्तियों में से एक कबीर दास हैं, जिन्हें व्यापक रूप से भक्ति आंदोलन के केंद्रीय व्यक्ति के रूप में पहचाना जाता है, जो 15वीं शताब्दी में हुआ था। इस आंदोलन के दौरान, उन्होंने तुलसीदास, सूरदास, मीराबाई और अन्य जैसे कई अन्य प्रगतिशील दार्शनिकों के साथ मिलकर जातिगत मतभेदों, ईश्वर में विश्वास और नैतिक मूल्यों के नाम पर समाज के पिछड़ेपन और कठोरता का विरोध किया। इस तथ्य के बावजूद कि वे कबीर दास के समय की तरह स्थिर नहीं हैं, फिर भी वही मुद्दे आज भी मौजूद हैं। नतीजतन, इस समीक्षा का उद्देश्य कबीर के मानवीय एकता के आदर्शों को पुनर्जीवित करना है, जिसे वे एक ऐसे समाज की नींव मानते थे जो शांतिपूर्ण और रचनात्मक दोनों हो। इस लेख की शुरुआत में पृष्ठभूमि की जानकारी के रूप में प्रमुख क्षेत्रों का विवरण दिया जाना चाहिए ताकि इस लेख में बाद में कवर की जाने वाली समीक्षा को और अधिक समझने योग्य बनाया जा सके।

कबीर जुलाहा समाज के सदस्य थे और अपने और अपने परिवार के भरण-पोषण के लिए कड़ी मेहनत पर आधारित जीवन जीते थे। वह 15वीं शताब्दी में रहने वाले व्यक्ति थे। यह कहना सही नहीं है कि वह एक क्लासिक संत थे जो किसी भी सामाजिक दायित्व से ऊपर थे [12]। उनके जन्म के संबंध में विभिन्न परिकल्पनाएँ प्रस्तावित की गई हैं, और परिणामस्वरूप, किसी भी निष्कर्ष पर पहुँचना चुनौतीपूर्ण है। प्रचलित मान्यता के अनुसार, संत कबीर दास एक ब्राह्मण वंश की महिला की संतान थे। जब वह अभी भी एक छोटे बच्चे थे, तो उनकी माँ ने उन्हें छोड़ दिया और उन्हें एक जलाशय के पास छोड़ दिया। उनकी खोज बनारस के एक मुस्लिम बुनकर नीरू ने की, जो उन्हें वापस अपने घर ले आया। जिस तरह से उनकी पत्नी ने बच्चे का पालन-पोषण किया, वह ऐसा था मानो वह उनका अपना बेटा हो। जन्म के बाद बच्चे का नाम कबीर रखा गया।

उन्होंने अपने जीवन के अंतिम समय में मेघर की यात्रा की थी, इस तथ्य के बावजूद कि वे काशी में रह रहे थे, ताकि इस पारंपरिक मान्यता को चुनौती दी जा सके कि "काशी में मरने से स्वर्ग में प्रवेश मिलता है और मेघर में मरने से नरक मिलता है।"

कबीर एक सुधारक थे जिनके विचार बहुत ही व्यावहारिक थे, इस तथ्य के बावजूद कि उनके पास वैज्ञानिक शिक्षा नहीं थी। आध्यात्मिकता के प्रति अपनी लालसा को शांत करने के लिए, उनका लक्ष्य वाराणसी में प्रसिद्ध आध्यात्मिक व्यक्ति रामानंद का चेला या अनुयायी बनना था। शेख तक्की नाम के एक सूफी पीर को कबीर का गुरु कहा जाता है, जैसा कि खजिनात अल-असफिया में बताया गया है। यह स्पष्ट है कि कबीर की शिक्षा और विश्वदृष्टि पर सूफीवाद का महत्वपूर्ण प्रभाव रहा है। वाराणसी शहर में, कबीर चौरा के नाम से एक मोहल्ला है, जिसके बारे में माना जाता है कि यहीं पर उन्होंने अपना बचपन बिताया था।

असामान्य होने के अलावा, उनके विचार व्यावहारिक भी थे। ये सभी गुण एक में बुने हुए थे: वे एक संत, एक कवि, एक रहस्यवादी, एक गहन विचारक, एक समाज सुधारक और अन्य उपलब्धियाँ थे। वे एक आम आदमी थे जो आम लोगों की बोली बोलते थे, उनके साथ घूमते थे, उन्हें पढ़ाते थे और आम लोगों की तरह ही अपना जीवन जीते थे। उनका पेशा बुनाई था, और उनके जीवन का मिशन मानव सभ्यता को उसके सभी आयामों में "अच्छी तरह से बुने हुए मानव नेटवर्क" में बुनना था। वे एक बुनकर थे।

उद्देश्य

1. कबीर दास के जीवन और एक संत कवि के रूप में उनके विकास का अध्ययन करना
2. हिन्दी और कबीर की दलित आलोचना का अध्ययन करना

कबीर दास के दर्शन और शिक्षाएँ

कबीर द्वारा लिखी गई कविताएँ जीवन के प्रति उनके अपने विशेष दृष्टिकोण का प्रतिबिंब हैं। पुनर्जन्म और कर्म वे प्राथमिक विषय थे जिन्हें उन्होंने अपने लेखन में संबोधित किया। वे अपने दैनिक जीवन में सरलता में विश्वास करते थे। वे इस विचार में दृढ़ विश्वास रखते थे कि ईश्वर बिना किसी भेद के एक है। 'कोई बोले राम राम कोई खुदाई' एक ऐसी धारणा थी जिसका उन्होंने समर्थन किया। चाहे आप हिंदू भगवान या मुस्लिम भगवान का नाम चिल्लाएँ, मूल उद्देश्य यह संदेश फैलाना था कि केवल एक ही ईश्वर है जो इस शानदार ब्रह्मांड के निर्माण के लिए जिम्मेदार है। अपने विश्वासों और विचारों के संदर्भ में, कबीर दास हिंदू समुदाय द्वारा लागू की गई जाति व्यवस्था के साथ-साथ स्वर्गीय मूर्तियों की पूजा करने की अवधारणा के भी विरोधी थे। वे देवता पूजा की परंपरा के भी विरोधी थे। इसके विरोध में, उन्होंने आत्मा की वेदांतिक अवधारणा की वकालत की। उन्होंने सूफियों द्वारा अपनाई गई सरल जीवन शैली की वकालत की। संत कबीर के दर्शन को बेहतर ढंग से समझने के लिए, यह सुझाव दिया जाता है कि आप उनकी कविताएँ और दो-पंक्ति वाली पंक्तियाँ पढ़ें जिन्हें दोहा कहा जाता है। ये दोहे उनके मन और आत्मा से बात करते हैं।

भक्ति आंदोलन और कबीर दास द्वारा निभाई गई भूमिका

भक्ति आंदोलन के दौरान, महान वेदांतिक दृष्टि के पूर्ण निहितार्थ पहली बार प्रकाश में आए। यह विशाल धार्मिक आंदोलन जो प्राथमिक संदेश देने की कोशिश कर रहा था, वह दोहरा था: पहला, जाति (और समूह) संघर्ष महत्वहीन हैं; दूसरा, जो कोई भी भगवान के प्रति समर्पित है, उसे भगवान का आशीर्वाद मिलता है। दूसरा बिंदु यह है कि इस बात पर व्यापक रूप से सहमति थी कि वास्तविक धर्म या भगवान तक पहुँचने का मार्ग ज्ञान या कर्मकांड नहीं है, बल्कि भक्ति है, जो बिना किसी लगाव के भगवान के प्रति शुद्ध भक्ति है।

15वीं शताब्दी में भक्ति आंदोलन के सदस्य होने के बावजूद कबीर ने यह ज्ञान दिया कि व्यक्ति को समानता और सद्भाव की ओर ले जाने वाले मार्ग पर चलना चाहिए। कबीर ने इस तथ्य की ओर ध्यान दिलाया कि समाज में भेदभाव को मिटाने की सख्त जरूरत है। महात्मा गांधी, दीन दयाल उपाध्याय, डॉ. भीम राव अंबेडकर और राम मनोहर लोहिया और अन्य सहित कई उल्लेखनीय व्यक्तियों ने इसी तरह के विचारों का पालन किया। समन्वयवाद, जो विभिन्न धर्मों का विलय है, कुछ ऐसा है जिसकी कबीर ने वकालत की क्योंकि उन्हें लगता है कि इससे सामाजिक असमानता को दूर करने में मदद मिलेगी। कबीर ने कई सीधे-सादे गुणों पर जोर दिया, जिनमें प्रेम, ईमानदारी, सच्चाई, खुद पर विश्वास और आत्मनिरीक्षण के विचारों को प्रोत्साहित करना शामिल है। उन्होंने सामाजिक-आर्थिक असमानता को खत्म करने की वकालत की।

अपने पूरे जीवन में कबीर जाति के मुखर विरोधी रहे। उन्होंने इस बात पर ज़ोर दिया कि ईश्वर की रचना में हर एक व्यक्ति को समान मूल्य के साथ बनाया गया है। उन्होंने अपने अनुयायियों को उन प्रथाओं को छोड़ने के लिए प्रोत्साहित किया जो स्वाभाविक नहीं थीं, जैसे कि अस्पृश्यता, उच्च और निम्न दृष्टिकोण रखना और ऐसी अन्य प्रथाएँ। इसके अतिरिक्त, वे मूर्तियों की पूजा करने की प्रथा के साथ-साथ विभिन्न देवी-देवताओं की पूजा, साथ ही पारंपरिक धार्मिक समारोहों और अनुष्ठानों के भी विरोधी थे। कबीर उन लोगों से घृणा करते थे जिनके दो अलग-अलग मानक थे और वे पाखंड के कट्टर विरोधी थे।

उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि प्रेम ही एकमात्र ऐसा तंत्र है जिसके द्वारा पूरी मानव जाति को भाईचारे के अटूट बंधन में बांधा जा सकता है। एक-दूसरे के प्रति दुर्भावना रखने के बजाय, यीशु ने सभी को एक-दूसरे से प्रेम करते रहने का आह्वान किया। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि नैतिक रूप से श्रेष्ठ व्यक्तियों के साथ रहना कितना

महत्वपूर्ण है जो मूल्यों और नैतिकता को बनाए रखने के लिए प्रतिबद्ध हैं। भक्ति आंदोलन पर कबीर दास की रचनाओं का काफी प्रभाव माना जा सकता है, जिसमें कबीर ग्रंथावली, बीजक, अनुराग सागर और साखी ग्रंथ जैसे शीर्षक शामिल हैं। यह सिख धर्म का धर्मग्रंथ है, जिसे गुरु ग्रंथ साहिब के नाम से जाना जाता है, जिसमें उनके पद हैं। उनके 'कबीर के दोहे' दो-पंक्ति वाले दोहे थे जिन्होंने उन्हें सबसे अधिक प्रसिद्धि दिलाई।

सामाजिक सुधार के माध्यम के रूप में कबीर दास की शिक्षाओं का सार

संत कबीर ने सभी वर्गों के लोगों को प्रेम और सहिष्णुता का सीधा संदेश दिया। उनकी शिक्षाओं ने इस विचार को दोहराया कि ब्रह्मांड में केवल एक ही ईश्वर है। उनकी मान्यताओं के अनुसार, ईश्वर असीम, असीम, शुद्ध, सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान है। मूर्ति पूजा और जाति व्यवस्था दो ऐसी चीजें थीं जिनसे कबीर घृणा करते थे। वह एक कट्टर नास्तिक थे। कहा जाता है कि भक्ति आंदोलन के दो सबसे महत्वपूर्ण लोगों कबीर और तुलसीदास ने "जाति समस्याओं" के बारे में कविताएँ लिखी हैं। यह उन अध्ययनों के अनुसार है जो जाति मुक्त समाज के लिए भक्ति आंदोलन की आकांक्षाओं की जांच करते हैं।

कबीर का उद्देश्य एक ऐसे धर्म का प्रसार करना था जो प्रेम पर आधारित हो और जिसमें सब कुछ समाहित हो। उनका हमेशा से यह मानना रहा है कि भक्ति के बिना आस्था रखना भक्ति न होने के समान है और इस आस्था के साथ ऐसी धुनें होनी चाहिए जो सर्वशक्तिमान ईश्वर की महिमा का गुणगान करें। पहली बार कबीर ही वह संत थे जिन्होंने हिंदू धर्म और इस्लाम को एक साथ लाया। युगलानंद आगे बताते हैं, "हिंदू मंदिर जाते हैं, मुसलमान मस्जिद जाते हैं, लेकिन कबीर उस जगह जाते हैं जहां दोनों इकट्ठा होते हैं, बिना किसी क्रोध के।" इन दो धर्मों के मिलन से एक अंकुर निकलता है, जो बीच में मिलने वाली दो शाखाओं के समान है।

अपने पूरे जीवन में, उन्होंने लोगों को बिना किसी शर्त के प्यार करने और अन्य जीवित प्राणियों के प्रति दया रखने के लिए लगातार प्रोत्साहित किया। जैसा कि कबीर ने टिप्पणी की थी ,उन्होंने अन्याय की उस असहनीय स्थिति के प्रति अपनी अस्वीकृति व्यक्त की थी।

करनी करनी सब कहे, करनी माहे बिबेक

वेहा करनी बहे जान दे, जो नहीं परखे एक

दूसरे शब्दों में, संत कबीर की दोहों में दी गई शिक्षा के अनुसार, न्याय का अर्थ है सभी के साथ समान व्यवहार करना।

कबीर दास ने राष्ट्र के लिए क्या प्रस्तुत किया है?

उत्तर भारत में यह आम बात है कि संत कबीर दास, एक भारतीय संत जो मध्य युग में रहते थे और भक्ति और सूफी आंदोलनों से जुड़े थे, भक्ति आंदोलन के संस्थापक थे। उनके जीवन चक्र का एक महत्वपूर्ण हिस्सा काशी क्षेत्र में केंद्रित है, जिसे बनारस या वाराणसी भी कहा जाता है। उनका बुनकर जाति और रोजगार से जुड़ाव था जो जुलाहा के पास था। यह व्यापक रूप से स्वीकार किया जाता है कि भारत में भक्ति आंदोलन में उनका महत्वपूर्ण योगदान, फ़रीद, रविदास और नामदेव के साथ, एक अग्रणी योगदान माना जा सकता है। वह एक ऐसे संत थे जिनके पास एक रहस्यमय चरित्र था जो नाथ परंपरा, सूफीवाद और भक्ति का एक संयोजन था, जिसने उन्हें अपने आप में एक बहुत ही खास धार्मिक व्यक्ति बना दिया। उन्होंने जोर देकर कहा कि दुख का मार्ग वह जगह है जहाँ कोई वास्तविक प्रेम और जीवन पा सकता है।

कबीर दास की रचनाएँ

कबीर दास ने जो किताबें लिखी हैं, उनमें से ज़्यादातर गीत और दोहों का संकलन हैं। कुल 72 रचनाएँ हैं, जिनमें रेख़्ता, कबीर बीजक, सुखनिधान, मंगल, वसंत, सबद, साखियाँ और पवित्र आगम सबसे महत्वपूर्ण और प्रसिद्ध हैं।

कबीर दास की लेखनी और भाषा शैली सरल और परिष्कृत दोनों है। उन्होंने अपने दोहों की रचना आत्मविश्वास और सहजता के साथ की, जो सार्थकता और अर्थ से भरपूर हैं। उन्होंने अपने अस्तित्व की गहराई से ही अपने शब्दों को लिखा। उन्होंने जो दोहे और दोहे लिखे हैं, उनमें पूरी दुनिया का सार समाया हुआ है। ज्ञानवर्धक होने के साथ-साथ उनके शब्द उत्साहवर्धक भी हैं।

हिंदी और कबीर की दलित आलोचना

दलित आलोचना की अवधारणा

दलित आलोचना से हमारा तात्पर्य दलित लेखकों द्वारा लिखी गई आलोचना से है। स्वाभाविक रूप से दलित आलोचना उस आलोचना की आलोचना करती थी जिसे आम तौर पर मुख्यधारा का साहित्य कहा जाता है। गैर-दलित या सामान्य अर्थ में उच्च जाति के लेखक वे लेखक हैं जिनकी रचनाओं को मुख्यधारा माना जाता है। जब दलित लेखक पहली बार अपना साहित्यिक आंदोलन शुरू कर रहे थे, तो वे स्थापित साहित्य की कठोर आलोचना के लिए जाने जाते थे। आलोचना के क्षेत्र तक सीमित होने के अलावा, उनकी आलोचना में न केवल लघु कथाएँ, संस्मरण, उपन्यास और कविताएँ शामिल थीं, बल्कि लेखन के अन्य रूप भी शामिल थे। हालाँकि, इस अध्याय के लिए, हम खुद को आलोचनात्मक लेखन या आलोचनात्मक सिद्धांत के रूप में जाने जाने वाले तक ही सीमित रखेंगे। हम उन तरीकों पर भी ध्यान देना चाहेंगे जिनमें दलित लेखकों ने खुद दलित साहित्य के प्रति अपनी अस्वीकृति व्यक्त की है। इस आलोचना के संदर्भ में, कबीर का संदर्भ भी दिया जाएगा। 'दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र' एक प्रमुख दलित विद्वान शरण कुमार लिंबाले द्वारा लिखी गई एक पुस्तक है, जिसमें उन्होंने दलितों से जुड़े लेखन के विभिन्न चरणों का वर्णन किया है। 1. शुरुआती चरण में दलित लेखकों ने अपनी पीड़ा व्यक्त की। दूसरे चरण में उन्होंने व्यवस्था द्वारा लगाए गए बंधनों को अनदेखा करने का फैसला किया। तीसरे चरण में चिंतनशील लेखन पर ध्यान केंद्रित किया गया, जो इस बात पर आधारित था कि हमारी परिस्थितियाँ इस निष्कर्ष पर कैसे पहुँचीं। इस बिंदु पर, चौथे और सबसे हालिया चरण में, जातिवादी सामाजिक व्यवस्था के विकल्प के रूप में एक समतावादी समाज विकसित करने का प्रयास किया जा रहा है।

इस शताब्दी के प्रथम साढ़े दस वर्षों में दलित दर्शन के विकास में उल्लेखनीय तेजी आई। दलित लेखन के क्षेत्र में सृजनात्मक पक्ष काफी समृद्ध है। दूसरी ओर दलित आलोचना उतनी उन्नत नहीं है। इसके बावजूद यह बताना जरूरी है कि दलित साहित्य विधा का यह विशेष भाग तेजी से विकसित हो रहा है। सबसे पहले हम इस अध्याय के प्रथम उप-अध्याय में दलित विषय के महत्व को समझने का प्रयास करेंगे। दूसरे उप-अध्याय में दलित आलोचना के विकास के प्रारंभिक चरण की जांच करेंगे। तीसरे उप-अध्याय में दलित आलोचना के परवर्ती विकास की जांच करेंगे और अंतिम उप-अध्याय में दलित विषय में कबीर पर चर्चा की रूपरेखा प्रस्तुत करेंगे। ये दोनों घटनाएं एक ही उप-अध्याय में घटित होंगी।

दलित आलोचना का अर्थ

यह ध्यान रखना आवश्यक है कि फुले-अंबेडकर का दर्शन दलितों पर संपूर्ण विमर्श की नींव का काम करता है; फिर भी, इस दर्शन के साथ सबसे अधिक निकटता से जुड़ा हुआ संबंध दलित साहित्य में पाए जाने वाले आलोचनात्मक गद्य का है। अपने अस्तित्व के आरंभ से ही दलित चिंतन क्रांतिकारी समर्पण, आक्रामक रुख, नकार की भावना, अंबेडकरवादी प्रवृत्ति और इससे उपजी परिवर्तन की चाह से जुड़ा रहा है। दलित लेखकों द्वारा लिखे गए उपन्यासों के अस्तित्व से इसका प्रमाण मिलता है। दलित आलोचना के कार्य पर प्रकाश डालने वाले लेख के लेखक कंवल भारती के अनुसार, "उनके सीधे, सरल और यथार्थवादी लेखन ने साहित्य को एक नई परिभाषा दी, आत्म-अनुभव को स्थापित किया और साहित्य को प्रामाणिकता प्रदान की, जिसने कल्पना के साहित्य को कटघरे में खड़ा कर दिया।"

1. डी.एन. सिंह ने तर्क दिया है कि पुस्तक समीक्षाओं से दलित आलोचना का उद्भव उच्च जातियों के आलोचकों द्वारा लगाए गए आरोपों की प्रतिक्रिया थी। सिंह इस तथ्य को स्वीकार करते हैं कि दलित आलोचना की उत्पत्ति पुस्तक समीक्षाओं से हुई है।

2. डी.एन. सिंह जब इस प्रकरण का निष्कर्ष लिख रहे थे, तो उन्होंने कहा कि दलित आलोचना ने अभी-अभी अपनी यात्रा शुरू की है, और अभी भी इसे काफी लंबा सफर तय करना है।

3. ओमप्रकाश वाल्मीकि ने दलित आलोचना को दलित चेतना का परिणाम मानते हुए लिखा है- "दलित चेतना का सीधा संबंध सृजन से है। ... यह दलित चेतना दलित साहित्य की आंतरिक ऊर्जा में नदी के तेज प्रवाह की तरह समाहित है, जो इसे पारंपरिक साहित्य से अलग करती है।"

दलितों की आलोचना मुख्यतः निम्नलिखित पाँच स्रोतों से प्राप्त होती है:

1) फुले-अम्बेडकर के लेखन और विचारों से।

2) दलित जीवन के अनुभव से.

3) दलित आंदोलन से.

4) साहित्य में क्रांतिकारी आलोचना की परंपरा से।

5) दलित साहित्य पर वैचारिक हमलों से.

दलित साहित्य पर हो रहे हमलों को ध्यान में रखते हुए दलित साहित्य की आलोचना ने पलटवार की रणनीति अपनाई। मुख्यधारा की आलोचना की अपनी जांच के दौरान मोहनदास नैमिशराय ने लिखा, "हिंदी आलोचना आज अपनी त्रासद स्थितियों से गुजर रही है।" जब साहित्यिक उपलब्धियों की बात आती है तो वह साहित्यिक उपलब्धियों के सकारात्मक पक्ष को स्थापित करने के बजाय नकारात्मकता से भरी होती है। वह कई तरह के भ्रमों और भ्रांतियों में लिपटी होती है। "उत्कृष्टता" और "पवित्रता" की आड़ में जाति-आधारित संकीर्णता और सामुदायिक आदर्शों की स्थापना हो रही है। इस आलोचना में जो सबसे महत्वपूर्ण बात कही जा रही है वह यह है कि मुख्यधारा वस्तुतः उच्च जातियों की मुख्यधारा है जो अपनी रचनात्मक स्वायत्तता को लेकर हमेशा आत्ममुग्ध रही है।

निष्कर्ष

"मानवता की भावना को सर्वोपरि रखते हुए कबीर एक ओर हिंदू संस्कृति में व्याप्त जातिवाद, धार्मिक रूढ़िवाद, अंधविश्वास और ऐसी ही अन्य बातों की आलोचना करते हैं, तो दूसरी ओर मुस्लिम समुदाय में प्रचलित धार्मिक रीति-रिवाजों को उजागर करते हैं। इस आलोचना से लोग नींद से जाग उठते हैं और रूढ़िवादी लोग इससे चिढ़ जाते हैं। लोगों के मन से शस्त्रों का भय और सामाजिक रूढ़िवाद का भ्रम दूर हो जाता है; साथ ही यह आलोचना उनके भीतर सुप्त पड़ी मानवता की भावना को पुनः जागृत करती है। आज भी हमारे समाज को परेशान करने वाले मुद्दे काफी हद तक कबीर के समय के समाज से जुड़े हुए हैं। यही कारण है कि कबीर का हमारे समाज, साहित्य और आलोचना में महत्वपूर्ण स्थान बना हुआ है। कबीर की कविता सभी प्रकार की संकीर्णता, हठधर्मिता और सामंती-शोषणकारी प्रवृत्तियों को सीधी चुनौती है। जैसे-जैसे हमारा समय अधिक चुनौतीपूर्ण होता जाएगा, कबीर की भूमिका और भी महत्वपूर्ण होती जाएगी। कबीर की रचनाएँ आज भी प्रासंगिक हैं या नहीं, इस विषय पर डॉ. शुकदेव सिंह के विचार एकदम स्पष्ट और आधुनिक हैं। जहाँ तक उनका सवाल है, "कबीर का साहित्य प्रासंगिक है क्योंकि यह सांप्रदायिकता और जातिवाद जैसे अमानवीय संगठनों के खिलाफ है।" यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि कबीर की रचनाएँ भारतीय परिवेश में प्रासंगिक हैं क्योंकि कुछ हद तक वे समाजवादी और लोकतांत्रिक हैं। इस पुस्तक के माध्यम से मनुष्य के प्रति मनुष्य के तिरस्कार का द्वार बंद हो जाता है।1. डॉ. शुकदेव सिंह द्वारा व्यक्त किए गए विचार आधुनिक और प्रासंगिक किस्म के हैं। जैसा कि हम स्वयं देख सकते हैं, आधुनिक दुनिया में कबीर के काम का महत्व उनके जीवनकाल की तुलना में काफी अधिक है।

संदर्भ

1. सुनीत वर्मा: प्रेम, उपचार और मानव एकता: संत कबीर दास से सीखें। दिल्ली विश्वविद्यालय। कैलिफोर्निया इंस्टीट्यूट ऑफ इंटीग्रल स्टडीज। 2017।
2. राजनंदिनी दास: शंकरदेव और कबीरदास: उनकी भक्ति का संक्षिप्त तुलनात्मक विश्लेषण। खंड-4. अंक 9. 2016.
3. डॉ. परेश के. शाह: संत कबीर: सार्वभौमिक धर्म या मानव के धर्म के प्रवर्तक। पुणे अनुसंधान। अंग्रेजी का एक अंतरराष्ट्रीय जर्नल। खंड 3. अंक 6. 2017.
4. प्रबीरा सेठी: 21वीं सदी में संत कबीर दास के समन्वयवाद की प्रासंगिकता। इंडियन जर्नल ऑफ सोशल इंक्वायरी। खंड-9. संख्या-1. 2017
5. डॉ. के. सी. शर्मा, प्रो. पी. पी. सिंह, डॉ. शफकत अल्ताफ, डॉ. एस. इकबाल कुरैशी, डॉ. तनवीर हयात: आलमदार: कश्मीरी समाज और संस्कृति की एक पत्रिका। मरकज-ए नूर शेख-उल-आलम अध्ययन केंद्र, कश्मीर विश्वविद्यालय। 2017.
6. नेहा दाभाड़े: कबीर: प्रेम, रहस्यवाद और एक वैकल्पिक दृष्टि। सब रंग इंडिया। 2018.
7. डॉ. राजनंदिनी दास: कबीरदास के विशेष संदर्भ में भारत में भक्ति धर्म। खंड-7। अंक-2। 2018.
8. हिमांशु रॉय: कबीर के राजनीतिक विचार। मीडियम (देशमुख पटेल)। 2019.

9. नीता समाद्दर: कबीर दास - एक समाज सुधारक (हिंदी शोध लेख)। जेटीआईआर। खंड-6, अंक-6। 2019।

10. दिव्य ज्योति: जाति की समस्या: कबीर में भक्ति और समानता। राजनीतिक अध्ययन केंद्र। जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली। 2021।

11. सरल झिंगरन: धर्म और जाति आधारित भेदों से परे मानव एकता के दूत के रूप में कबीर और गांधी।

12. उमाशंकर चौधरी, 'कबीर इन डायलॉग', आधार प्रकाशन, पंचकूला, हरियाणा, 2021

13. कबीर, 'कबीर ग्रंथावली' (संपादक - पारसनाथ तिवारी), राका प्रकाशन, इलाहाबाद, सं॰ 2019

14. कबीर, 'कबीर ग्रंथावली', द्वितीय संस्करण (संपादक - ओयामा सुंदर दास), लक्षभारती प्रकाशन, 2020

15. कंवल भारती, 'कबीर का ज्ञान', स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली, 2021

16. कमला वर्मा, 'जाति के प्रश्न पर कबीर', द मार्जिनलाइज्ड, इग्नू रोड, नई दिल्ली, 2017

17. केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीर संप्रदाय', हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, 2019

18. गोविंद त्रिगुणायत, 'कबीर की विचारधारा', साहित्य निकेतन, कानपुर, संवत 2019